Volume : 6 | Issue : 2 | February - 2017 ISSN - 2250-1991 | IF : 5.215 | IC Value : 79.96

Original Research Paper Hindi

दयाराम सतसई' में भक्ति और नीति

डॉ.उत्तम पटेल

एसोसियेट प्रोफेसर एवम् अध्यक्ष, हिंदी विभाग, श्री वनराज आर्ट्स एण्ड कॉमर्स कॉलेज, धरमपुर, जिला–वलसाड–396050 (गुजरात)

ABSTRACT

गुजराती मध्यकालीन कवियों में नरसिंह मेहता, प्रेमानंद के बाद दयाराम महत्वपूर्ण कवि हैं। इन्होंने गुजराती एवम् हिंदी दोनों में लेखनी चलाई थी। इन्हें श्रृंगार काव्य को लेकर गुजरात का जयदेव तक कहा जा चुका है। इन्होंने ब्रजभाषा में विपुल साहित्य-सर्जन किया है। सतसई इनकी उच्चकोटि की रचना है। दयाराम मूलतः भक्त कवि हैं किन्तु उन्होंने भक्ति के अतिरिक्त श्रृंगार एवम् नीति विषयक दोहों की भी रचना की है। उनका श्रृंगार-वर्णन प्रेम-लक्षणा भक्ति ही है। सतसई में कवि की अनन्य भक्ति-भावना के दर्शन होते हैं। तो उनकी सतसई में नीति-विषय दोहों की संख्या सबसे अधिक है। दयाराम ने विभिन्न विषयों को लेकर नीति-विषयक दोहे रचे हैं।

KEYWORDS गुजराती, मध्यकालीन, भक्ति, नीति, सतसई।

प्रस्तावना- मध्यकालीन गुजराती कविता के आदिकवि नरसिंह मेहता हैं तो अंतिम कवि दयाराम। दयाराम पुष्टिमार्ग में दीक्षित हुए थे। इन्होंने गुजराती के अतिरिक्त ब्रज, मराठी, पंजाबी और कच्छी में भावगीतों की रचना की थी। बचपन ही से वैष्णव मंदिर में जाने के कारण उनमें भक्ति की धारा प्रस्फुटित हुई थी। आजीवन श्रीकृष्ण को समर्पित रहे थे। कृष्ण के अतिरिक्त किसी का भी कीर्तन नहीं करते थे। उनकी गुजराती रचनाओं में 'रसिक वल्लभ', 'भक्ति पोषण', 'श्रीकृष्णनाम माहात्म्य', 'भक्तवेल', 'रूक्मिणी विवाह', 'अजामिल आख्यान', 'सारावलि', 'मुरली लीला', 'दाण चातुरी', 'प्रेमरस गीता' प्रमुख हैं। दयाराम के संपूर्ण गुजराती ग्रंथों में 'रसिक वल्लभ' उनकी श्रेष्ठ रचना मानी जाती है। तो हिंदी में उनकी सर्वश्रेष्ठ रचना है-सतसई।

1.भक्ति-वर्णनः

दयाराम के ग्रंथों में शुद्धाद्वैत एवम् पुष्टिभक्ति का सुंदर निरूपण मिलता है। 'सिद्धांतसार', 'भक्तिविधान', 'संप्रदायसार', 'पुष्टिपथसार मणिधाम' आदि ग्रंथों में पुष्टि-भक्ति का महत्व प्रतिपादित किया गया है। अतः यह बात निर्विवाद है कि दयाराम पुष्टिमार्गी भक्त कवि थे।

इस कवि पर धार्मिक दृष्टि से पुष्टि संप्रदाय का और साहित्यिक दृष्टि से हिंदी के रीति संप्रदाय का प्रभाव एक साथ पड़ा था।

'दयाराम सतसई' भक्ति और रीति के समन्वय का अभूतपूर्व ग्रंथ है। रीतिकालीन हिंदी कवियों की रचना में भक्तिविषयक उद्गार मिलते हैं, पर वे भक्ति-विभोर मन के उद्गार न होकर, विलास-जर्जर मन की प्रतिक्रियाएँ ही हैं। इस दृष्टि से 'दयाराम सतसई' में भक्ति एवम् रीति का जो समन्वय हुआ है, वह दर्शनीय है। दयाराम का मन श्रृंगार में अधिक रमा है, किन्तु उनके श्रृंगार का आधार कृष्ण-विषयक रति है। सतसई के अंत में काव्य का प्रयोजन स्पष्ट करते हुए दयाराम ने कहा है-

"पुरुषोत्तम गोपीश श्री कृष्ण मनोहर रूप।
तद् प्रीत्यर्थ सुग्रंथ यह, नहिं, नहीं रिझवन को भूप।।"

अर्थात् मैंने यह ग्रंथ श्रीकृष्ण के प्रेम से प्रेरित होकर लिखा है किसी राजा को रिझाने के लिए नहीं। कवि ने कहा है- श्रीकृष्ण से संबंधित न होने पर उत्कृष्ट काव्य भी निकृष्ट हो जाता है- बिन संबंध हरि काव्य सब, अति अद्भुत हु न काय। - उदाहरणों से यह स्पष्ट है कि सतसई कवि के कृष्ण-विषयक अनन्य प्रेम एवम् भक्ति का सुफल है। शुद्धाद्वैतदर्शन तथा प्रेम-लक्षणा भक्ति की भी इस ग्रंथ में सुंदर अभिव्यक्ति हुई है।

ग्रंथ के 'मंगलाचरण' में कवि ने अपने गुरू महाप्रभु वल्लभाचार्य तथा अपने आराध्य देव श्रीकृष्ण की वंदना की है। जैसे-

"श्री गुरु वल्लभ देव अरु, श्री बिट्ठल श्री कृष्ण।
पदपंकज बंदन करों, दुखहर पूरन-तृष्ण।।"

भगवत-स्तुति, विज्ञप्ति एवम् भक्ति-प्रकरण, नाम-माहात्म्य आदि प्रकरणों में कवि ने भगवान, भक्त एवम् भक्ति का माहात्मय प्रतिपादित किया है। जैसे- वेदों में कहा गया है कि ईश्वर ही एकमात्र कर्ता-हर्ता हैं। उनके बिना कोई न तो कुछ कर सकता है और न हर सकता है। हरि भक्तों के संबंध में कवि का कहना है कि अमृत अगर कहीं है तो वह निश्चय ही हरिजनों के कंठ में है। भक्ति का महत्व दिखाते हुए कवि कहते हैं कि ऐसा एक भी पाप नहीं है जो श्री हरिनाम से नष्ट न हो सकें।

कवि श्री दयाराम श्रीकृष्ण के ललित त्रिभंगी रूप पर आसक्त थे और युगल स्वरूप के उपासक थे। वे कहते हैं – जब आपका स्वरूप ही कुटिल है तो उसे धारण करने के लिए मुझे अपने हृदय को भी कुटिल बनाना पड़ा है। जैसी तलवार होगी, वैसी ही तो म्यान होगी।

दयाराम प्रेमलक्षणा भक्ति को सर्वोपरि मानते थे। वे कहते हैं- जिस प्रकार भ्रमर सभी पुष्पों का रस ग्रहण करता है पर विश्राम करता है पंकज पर ही, उसी प्रकार श्रीकृष्ण नवधा भक्ति को स्वीकार करते हुए भी वशीभूत प्रेमलक्षणा भक्ति से ही होते हैं। कवि ने प्रेमलक्षणा भक्ति का अधिकारी केवल पुष्टि मार्गी जीवों को माना है। जैसे सिंहनी का दूध केवल कंचन के पात्र में ही रह सकता है, अन्य पात्रों में नहीं। उसी प्रकार अन्य भक्त इस भक्ति पद्धति से प्राप्त प्रेम-रस के अधिकारी नहीं हो सकते-

"सांई भाजन प्रेमरस, प्रकट कृष्ण के गात्र।
पय पुंडरिकनी को न जो, रहि बिन कंचन पात्र।।"

कवि ने भक्ति को ज्ञान से तथा भक्त को ज्ञानी से श्रेष्ठ बताया है। ज्ञानी भगवान का बड़ा पुत्र है और भक्त छोटा, किन्तु प्रेम और वात्सल्य तो छोटे पर ही अधिक होता है। कवि ने अपने आराध्य को हरि, क्हान, घनश्याम, गोपाल, श्याम, ब्रजपाल, ब्रजचंद्र, ब्रजेश, नंदलाल, माधव, गोपीनाथ, गोपीश, बनवारी, नंदकिशोर, मधुसूदन, जगजीवन, जगदीश, वासुदेव, मुरारी, कंसारी आदि अनेक नामों से संबोधित किया है। कवि कहते हैं कि चरसिया बिना सोचे-समझे राम का नाम लेता है और चरस का पानी खींचकर अनायास ही अपने पैरों पर डालता है। हरि नाम का प्रताप देखिये कि चरसिये का चरणोदक बहुत- से आदमी पीते हैं।

पुष्टि भक्ति में भगवत् आश्रय का महत्व समझाते हुए कवि कहते हैं कि आश्रयविहीन मनुष्य का कोई प्रिय और पोषक नहीं होता। जैसे कमल-मूल के पृथ्वी से विच्छिन्न हो जाने पर कमल अपने पोषक सरोवर के पानी में पड़ा रहता है, तो पानी उसे सड़ा डालती है। यदि वह सरोवर के तट पर पड़ता है तो उसका प्रिय सूर्य ही उसे तीक्ष्ण ताप से जला डालता है। कवि कहते हैं कि बादल को देखिये, अनावृष्टि में भी वह निष्ठावान चातक की प्यास बुझाता है। पहाड़ पर खड़े वृक्ष सदैव हरे रहते हैं, पर उपवन के वृक्ष मुरझा जाते हैं। - ऐसे उदाहरणों द्वारा कवि ने 'पोषण तदनुग्रहं' वाले सिद्धांत को सिद्ध किया है। कवि कहते हैं-

"चिंता तू चित्त क्यों करें, विश्वंभर ब्रजपाल।
सक्कर सक्करखोर को, दधि मधि देत दयाल।।"

अर्थात् हे चित्त, तू चिंता क्यों करता है, श्रीकृष्ण सारे विश्व का पालन करते हैं। वे इतने दयालु हैं कि समुद्र के बीच रहनेवाले शक्करखोर पक्षी को भी शक्कर देते हैं। शक्कर के शौकीन को दही के बीच शक्कर देते हैं।

दयाराम की भक्ति विषयक उक्तियाँ श्रृंगार निरूपण में भी विद्यमान हैं। यही कारण है कि गुजराती के प्रसिद्ध साहित्य कन्हैयालाल मुनशी के मतानुसार- "दयाराम नितांत श्रृंगार के कवि हैं। दयाराम यानि नरसिंह मेहता से प्रारंभित मध्यकालीन कविता का मानो पूर्णविराम।"

दयाराम की श्रृंगारिक उक्तियों में आलंबन के रूप में प्रायः कृष्ण एवम् राधा ही विद्यमान हैं। आराध्य की लीलाओं का वर्णन, उसकी महिमा का गुणगान, उसके नाम का संकीर्तन ही कवि को इष्ट है। डॉ.सियाराम तिवारी के मतानुसार- "दयाराम ने अपनी भक्ति की तन्मयता को अपने काव्य में साकार कर दिया है। उनका राधा के सौंदर्य एवम् भगवान के मोहिनी अवतार की लीला का वर्णन अद्भुत है।" इस प्रकार भक्ति दयाराम की कविता का मेरुदंड है।

2.नीति-वर्णनः

धर्म, नीति एवम् काम विषयक उपदेश देना मध्यकालीन समय में कवि-कर्म था। यही कारण है कि रससिद्ध कवियों नें भी अपने काव्यों के बीच बीच में नीति-विषय कथन कहे हैं।

दयाराम ने भी तत्कालीन लोकरुचि का निर्वाह करते हुए सुंदर एवम् बोधगम्य नीति-कथन की रचना की है। जैसे-

"अति हठ करि जो पर बुरो, करे न लहि सुख सोइ।
आई निजके सार हति, स्व पकि कच्ची होइ।।"

अर्थात् अत्यंत हठ करके जो दूसरे का बुरा करता है, वह कभी सुख नहीं पाता।

जो दूसरे का बुरा चाहे और अपना भला चाहे तो उसीका बुरा होता है। जैसे कि सूर्य पर धूल डालनेवाले की धूल उसीके मुख पर गिरती है। बिना सोचे-समझे हमें कोई काम नहीं करना चाहिए। इतना करने के पश्चात् फिर जो कुछ हो, उसे भगवान की इच्छा समझना चाहिए। मनुष्य को भौंरे और सूप के शील को ग्रहण करना चाहिए। छलनी और मक्खी जैसा स्वभाव नहीं रखना चाहिए। क्योंकि छलनी गुणरूपी सार को तजकर दोषरूपी सार को ग्रहण करती है और मक्खी गुणरूपी सौरभ को तजकर दोष रूपी लहू को चखती है। कवि मन से कहते हैं- "क्रोध करें तो क्रोध पें, निंदे तों निज देह।

द्रोह करें तों अधर्म कों, करि तों हरिसों नेह।।"

अर्थात् हे मन, अगर तुझे क्रोध करना है तो क्रोध पर कर, निंदा करनी है तो अपनी देह की कर, द्रोह ही करना है तो अधर्म का कर और स्नेह ही करना है तो हरि से कर।

विवेक के बारे में कवि दयाराम कहते हैं कि रंक हो चाहे राजा, बिना विवेक के कोई भी सुशोभित नहीं होता। जैसे कि नवयौवना नारी सुंदर होने पर भी नाक के बिना कुरूप लगती है। विवेक के कारण ही मनुष्य अन्य प्राणियों से श्रेष्ठ है। यदि मनुष्य में विवेक नहीं है तो वह भी साधारण प्राणियों के समान है। बिना विवेक के धन-व्यय करने से कोई शोभा नहीं पाता।

दयाराम आगे कहते हैं- "दानों दुसमन हू भलों, बुरों मीन नादांन।
आहुति हु में हित सुज्ञके, लें जड़ को हित प्रान।।"

अर्थात् बुद्धिमान दुश्मन अच्छा, किन्तु नादान दोस्त बुरा। समझदार के द्वारा किए गए अहित में भी हित होता है और मुर्ख के द्वारा किया गया मूर्खतापूर्ण हित भी प्राणघातक होता है।

एक चित्त को दो स्थानों पर देखकर कोई चैन नहीं पा सकता। गाल फुलाना और गाना जैसे कभी भी एक साथ संभव नहीं है। सज्जन दुर्जन से लड़कर कभी विजयी नहीं हो सकता। छुरी ऊपर हो चाहे नीचे, कटती हमेशा ककड़ी ही है। जो बड़ा बुद्धिमान होता है वह सीधे सरल मार्ग पर चलता है, जो नीच होता है वह कुटिल गति ग्रहण करता है। शतरंज के खेल में हाथी और ऊँट को देख लो-

"सो बड़ सूधे मग चलें, कुटिल गती मतिमंद।
लख केहू शतरंज ज्यों, सूतर ओंर गयँद।।"

कवि नीति के बारे में कहते हैं- पिता की परीक्षा माता की मृत्यु के बाद, पुत्र की परीक्षा माता-पिता के अशक्त हो जाने पर, मित्र की परीक्षा गरीबी में और भाई की परीक्षा संपत्ति के बँटवारे के समय होती है-

"जनक जननिगत् परित्सा, सुनु अशक्य पितु मात।
मित संकट, दारिद्र निय, बांटा बांटत भ्रात।।"

प्रेम के बारे में कवि कहते हैं- प्रीति हो जाय और प्रकृति न मिले वह दोनों ही ओर से दुःख पाता है। जैसे रोटी और ऊख को एक साथ खाने से न तो उसे चबाया जा सकता है और न ही निगला जा सकता है।

निष्कर्ष- इस प्रकार "दयाराम ने मानव-प्रकृति को लेकर बहुत कुछ कहा है। संगति, संत और हरिजन, गुरु, सज्जन-दुर्जन, बड़े लोग, निंदक, याचक, ज्ञानी-मूर्ख, दूती और पाती, पराधीन और गुलाम, प्रारब्ध और भाग्य, ईश्वरेच्छा, संसार, श्रम, जीवन, मृत्यु, धन, स्वार्थ और परमार्थ, शरणागति, सावधानी, चतुराई, कलियुग, गुण, गरीबी, युक्ति, विवेक, अविधा, कला, कुकृत्य, मन और मनोवृत्तियाँ, त्याज्य और ग्राह्य आदि को अपनी रचना का विषय बनाया है। कहीं-कहीं पर काव्य के माध्यम से उपदेश भी दिए हैं।" दयाराम का नीति वर्णन उन्हें हिंदी के प्रमुख सूक्तिकारों में विशिष्ट स्थान प्रदान करवाती हैं। डॉ.अम्बा शंकर नागर के शब्दों में कहें तो- "सूक्तियों में दयाराम की सूझ-बूझ और मौलिकता की दाद देनी पड़ती है।" डॉ.शशिप्रभा जैन के शब्दों में-"दयाराम विद्वान, पण्डित, शास्त्रज्ञ, संगीतज्ञ और कथाकार होकर अपने अनुभव को लोक उदाहरणों के माध्यम से सफलतापूर्वक प्रस्तुत करते हैं।"

संदर्भ-संकेत-

1. दयाराम सतसई, संपा.डॉ.भगवतशरण अग्रवाल एवम् डॉ.महावीर सिंह चौहान,१९९८, पाश्व पब्लिकेशन, अहमदाबाद, दोहा क्रमांक-728
2. वही. दोहा क्रमांक-*701*
3. वही. दोहा क्रमांक-1
4. वही. दोहा क्रमांक-341
5. वही. दोहा क्रमांक-18
6. वही. दोहा क्रमांक-139
7. वही. दोहा क्रमांक-336
8. वही. दोहा क्रमांक-348
9. शुक्ल, रमेश, आपणां प्रतिनिधि सारस्वतो, 2012, प्रवीण प्रकाशन, राजकोट, पृ. 59
10. तिवारी, सियाराम (संपादक), भारतीय साहित्य की पहचान, 2015, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 204
11. दयाराम सतसई, संपा.डॉ.भगवतशरण अग्रवाल एवम् डॉ.महावीर सिंह चौहान,१९९८, पाश्व पब्लिकेशन, अहमदाबाद, दोहा क्रमांक-369
12. वही.दोहा क्रमांक-*385*
13. वही.दोहा क्रमांक-452
14. वही.दोहा क्रमांक-*483*
15. वही.दोहा क्रमांक-529
16. वही.दोहा क्रमांक-642
17. भट्ट, आचार्य रघुनाथ, हिंदी सतसई परंपरा में दयाराम सतसई, 1989, हिंदी साहित्य परिषद, अहमदाबाद, पृ.115
18. नागर, अम्बाशंकर (संपा),1968, दयाराम सतसई, भूमिका, साहित्य भवन प्रा.लि.इलाहाबाद, पृ. 54
19. जैन, शशिप्रभा, २००९,सतसई परंपरा में बिहारी सतसई और दयाराम सतसई, नमन प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 232